The Academic
International Journal of Multidisciplinary Research

An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 3 | Issue 11 | November 2025
ISSN: 2583-973X (Online)
Website: www.theacademic.in

प्राणतत्व का मानव शरीर में भूमिका

डॉ. डिलेश्वरी साहु

सहायक प्राध्यापक, योग विभाग, विप्र कला वाणिज्य एवं शारीरिक शिक्षा महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

डॉ. कैलाश शर्मा

प्राध्यापक, शारीरिक शिक्षा विभाग, विप्र कला वाणिज्य एवं शारीरिक शिक्षा महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

DOI : https://doi.org/10.5281/zenodo.17922421

ARTICLE DETAILS

Research Paper

Accepted: 22-11-2025

Published: 10-12-2025

Keywords:

प्राण, शरीर, ऊर्जा, वायु, शक्ति, चिन्तन, चेतना, प्राणायाम ।

ABSTRACT

प्राण एक जीवनी शक्ति है, ऊर्जा है, जिसके बिना जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती है, यह प्राण संपूर्ण ब्रहमाण्ड़ में व्याप्त है। इस प्रकार संसार में जो गति हमें दिखायी देती है। वह प्राण शक्ति का ही रूप है। यह प्राण चेतना है, जो संपूर्ण चर और अचर जगत में व्यापत है। पेड़–पौधों का बढ़ना, सूर्य–चॉद, तारों का गति करना। यह सब प्राण शक्ति के माध्यम से ही हो रहा है। अतः जहॉ–जहॉ गति है, वहां– वहां प्राण का पथ विद्यमान है, ये गति प्राण के माध्यम से संभव है। इसी प्रकार इस पिण्ड में प्राण तत्व विद्यमान है, बिना प्राणतत्व के जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती है। हमारी जो स्थूल व सूक्ष्म क्रियायें शरीर में होती रहती है। इनका आधार प्राण ही है। ये प्राण तल हमारे शरीर को हष्ट–पुष्ट और बलिष्ट व शक्तिशाली बनाती है। समस्त शारीरिक व मानसिक क्रियाओं का संचालन यह प्राण तत्व करता है। ये प्राण ही हमें आध्यात्मिक ऊंचाईयों तक ले जाने वाला होता है। शरीर में इस प्राण तत्व की न्यूनता होने पर रोग उत्पन्न हो जाता है, और इसी प्राण तत्व की अधिकता हो जाने पर शरीर हल्का निरोगी और स्वस्थ हो जाता है। जब मनुष्य बर्हिमुखी होता है, तब उसकी प्राण शक्ति बर्हिमुखी होती है, और जब वह मनुष्य साधक बन जाता है, तब यह प्राण शक्ति अन्तमुर्खी होने लगती है, और अर्न्तमुखी होकर अन्तःकरण को शुद्ध करती है। प्राणशक्ति उपचार शरीर के संपूर्ण ढांचे पर आधारित है। मनुष्य का संपूर्ण जैविक शरीर मुख्यतः दो भागों से बना होता है। एक दृश्य शरीर, जो दिखायी देता है तथा दूसरा न दिखायी देने वाला ऊर्जा शरीर जिसे 'जीवद्रव्य' शरीर कहते हैं। जीवद्रव्य शरीर अदृश्य रूप

से वह चमकदार आभा शरीर हैं। जो दृश्य शरीर को भेद कर उसके बाहर चारों ओर चार से पॉच इंच तक फैला होता हैं। परम्परागत रूप से परलोकदर्शी इस ऊर्जा शरीर को बायवी शरीर या बायवी चोला कहते हैं।

प्राण की अवधारणा

''मुखनासिकाभ्यां प्राणः।''

मुख एवं नाक में प्राणवायु रहता है। इस प्राण को सप्तार्चिश कहा है क्योंकि दो कान दो नेत्र दो नासिका रन्ध्र एवं एक मुख में सात प्राण के अग्नि स्वरूप को ज्योतिया कहीं जाती है।

मृत्यु के समय पुरूष जिस प्रकार के प्राण की चिन्तन करता है, उस चिन्तन के विषय– प्राण को ही प्राप्त करता है। इस प्राण को जो जानता है उसकी प्रजा (संतान) नश्ट नहीं होती, वह अमर हो जाता है। लिखा है–

उत्पन्तिमायति स्थानं विमुत्वं चैव पद्यधा।

अध्यात्म। चैव प्राणस्य विज्ञायामष्तमश्नुते।।[10]

(प्रश्नोप 3/12)

प्राण की उत्पति प्राण कैसे शरीर में आता है, शरीर में कहां रहता है, उसका पांच प्रकार का व्यापकत्व एवं उसके आध्यात्म को जानने से मोक्ष हो जाता है। जो पांच प्रकार का व्याप्कत्व है व व्यष्टि प्राण के नाम से जाना जाता है। इसी प्राण के नियन्त्रण का नाम प्राणायाम है।

प्राण का अर्थ और परिभाषा

प्राण शब्द (प्र+अन+अच) से बना है। जिसका अर्थ गति कम्पन्न, पकृष्ठता, गमन, आदि के रूप में ग्रहण किया जाता है।

आयुर्वेद के अनुसार

आयुर्वेद में वायु को प्राण की संज्ञा प्रदान की गयी हैं। वायु को आयु कहा गया हैं तथा वायु के द्वारा ही प्राणायाम निमेषादि क्रियायें सम्पन्न होती हैं। वायु प्राणायाम क्रिया को करता हैं।

''वायुः प्राणसंज्ञा प्रदानम् वायुः आयुः।

वायुः प्राणपानी, प्राणॉ रक्ष्यश्रतुभ्यॉहि प्राणाःजहाति''।।

तंत्र योग में प्राण :–

प्राण – किंचित योग और स्पंदन का प्रथम प्रसार। सवित् या चैतन्य–शक्ति शून्यता को खिलाकर उसके बाद प्राणरूप धारण करता है। सच तो यह है कि बुद्धि के आविर्भाव के पहले ही प्राण का उल्लास होता है। क्योकिं अन्तःकरण तत्व की सारभूत बुद्धि प्राण का सहारा लेकर ही प्रकट होने में समर्थ होती है। जीव की अपनी अधिष्ठित भूमि के तारतम्य के अनुसार उसके साधन के प्रकार का तारतम्य होता है। निम्न स्तर की आत्मा में जीव भाव प्रबल होने के कारण जीव की आधारनिष्ठ विचित्रता के अनुसार उसके साधन की विशिष्टता स्वाभाविक है।

अतएव प्राण भूमि के उपचार, बुद्धि भूमि में ध्यान तथा देह भूमि के कारण आदि उपाय के रूप में गिने जाते हैं। इनमें से उच्चार आदि सबसे अन्तरंग उपाय है। ध्यान आदि को उसकी तुलना में बहिरंग समझना चाहिए।

प्राण आदि जड़ तथा अपारमार्थिक होते हुए भी उनके उच्चार आदि पारमार्थिक स्वरूप प्राप्त करने में सहायक होने में बाधा नहीं है। इसका एक मात्र कारण यह है कि प्राण आदि प्रमाता में अहंता है। इसलिए ज्ञातष्त्व और कतष्त्व परम ऐश्वर्य विकल्प रूप में उपस्थित हो सकता है। क्योकिं विभिन्न प्रकार के अवच्छेद में से परिस्फुट रूप में अवधारण संभव है। फलस्वरूप तद्गत उच्चार या ध्यान पारमार्थिक स्वरूप प्राप्ति का निमित्त हो सकता है। शून्य प्रमाता में भी अवश्य उस प्रकार का ऐंश्वर्य संभव है, परंतु प्राण आदि प्रमाता में जैसा नियत अवच्छेद है । शून्य प्रमाता में वैसा कोई अवच्छेद नहीं इसलिए वह विकल्पि नहीं हो सकता। और इसलिए परमार्थ के प्रकाश का निमित्त भी नहीं हो सकता।

प्रश्न हो सकता है, कि प्राण आदि जड़ होने के बावजूद अगर उनका व्यापार पारमार्थिक स्वरूप प्राप्ति का निमित्त हो सकता है। तब घट–पट आदि बाह्य जड़ पदार्थ का व्यापार भी वैसा निमित्त क्यों नहीं हो सकता।

चरक सहिता में:– चरक संहिता में वायु को यन्त्र धारण करने वाली कही गयी हैं।

वायुस्तन्त्रयन्तधरः प्राणोदानसमान व्यानापानात्मा

प्रवर्तक श्रेष्टाना मुच्चा वचानां नियन्ता प्रणेता

च मनसः सर्वोन्द्रियाणामुद्योजे । (च0सं012:8)

अर्थात, प्राण, उदान, व्यान, समना और अपान को आत्मा का रूप कहा गया हैं, तथा यही षरीर की सभी चेश्टाओं का नियन्त्रण एवं प्रणयन करती हैं। सभी इन्द्रियों को अपने विशयों में प्रवृत करने वाली भी हैं।

प्रश्नोपनिषद के अनुसारः–

प्रश्नोपनिषद में प्राण को ईश्वर माना गया है।

''प्रज्ञापतिश्ररसि गर्भे त्वमेव प्रतिज्ञायसे

तुभ्यप प्राण प्रजास्त्विमा बलि हरन्ति यः प्राणे प्रतिविष्ठसि'' (7)

अर्थात, हे प्राण तू ही प्रज्ञापति हैं, तू ही गर्भ में विचसे वाला और माता–पिता के अनुरूप संतान में रूप में जन्म लेने वाला हैं। ये सब जीव तुझे ही भेंट समपर्ण करते हैं। तू ही अपानीय सब प्राणों के सहित सब के शरीर में स्थित हैं।

अर्थववेद के अनुसारः–

प्राणास्य नमो यस्य सर्वमिदं बरो।

यो भूतः सर्वस्येश्रवरो यस्मिन सर्व प्रतिष्टि।।

अर्थात् जिसके द्वारा यह संपूर्ण विश्व–ब्रह्माण्ड विद्युत है। उस महत्तोमहीयान प्राण को नमस्कार है, जो समस्त प्राणियों का शासक है, इस प्राण रूप महान तत्व को नमस्कार है।

ऐतरेण्य आरण्यक में एक जगह कहा कि :–

''सोऽयमाकाशः प्राणेन वृहत्वा विष्टब्ध

तघथायमाकाश प्राणेन वृहत्वा विष्टब्धः ।।''

(ऐतरेण्य 2/9/6)

प्राण ही इस विश्व ब्रहमाण्ड का धारक हैं, प्राण की ही शक्ति से जिस प्रकार यह आकाश अपने स्थान पर स्थित हैं। उसी प्रकार समस्त प्राणधारी जीव चीटी से बड़े जीव तक इस प्राण के द्वारा ही विधृत हैं।

प्राण उस तत्व का नाम हैं। जो प्राणन किया करता हैं। आत्मा का बोधन करता हैं और समष्टि रूप में प्राण ब्रहम ही हैं। वही ब्रह्म स्वयं भौतिकता से प्रावृत्त होकर सृष्टि संचालन का कार्य करता हैं।

छन्दोग्य उपनिषद के अनुसार :

''प्राणों वा इदं सर्वभूतं यदिदं किञच।।''

अर्थात् प्राण वह तत्व है, जिसके होने पर सबकी सत्ता है। प्राण में ही संपूर्ण जगत है।

ऐतण्रेय (2/2/10) में कहा गया हैः–

'' सर्वो टच सर्वे वेदा सर्वे धोषा एकॅव

व्याधति प्राण एवं प्राणऋच इत्येव विधात्।।''

अर्थात् जितनी भी ऋचाऐं हैं। जितने भी वेद हैं। जितने भी घोष हैं, वे सब के सब प्राणरूप हैं। प्राणतत्व को ही इन रूपों में विद्यमान माना हैं। उनकी इसी रूप में उपासना की जाती हैं।

प्राण की उत्पत्ति

अर्थववेद के 11/4/6 में प्राण के बारे में कहा गया हैः

''प्राणमाहुर्मातरिश्वानं वातो ह प्राण उच्यते,

प्राणो ह भूतं भव्यच्च प्राणे सर्व प्रतिष्ठित्म्''।।

(अर्थ 11/4/15)

अर्थात, प्राण जीवनदाता हैं, समस्त आकाश में वायुरूपेण व्यापक हैं। भूत वर्तमान और भविश्यत् तीनों काल उसमें स्थित हैं।

सृष्टि के उत्पत्ति के सन्दर्भ में प्रश्नोपनिषद में बड़े सौन्दर्य के साथ प्राण का वर्णन मिलता हैं। इस उपनिषद में कहा गया हैं, कि सर्वप्रथम इस उपनिषद् में कहा गया हैं, कि सर्वप्रथम हिरण्यगर्भ में एक जोड़ा उत्पन्न किया, जिसे क्रम में रयि तथा प्राण नाम दिया गया हैं।

प्रश्नोपनिषद् के अनुसारः–

''रयि च प्राणं चेत्येतो में बहुधा

प्रजाः करिष्यत इति 1/2।।''

सम्पूर्ण जीवों के स्वामी परमेश्वर को सृष्टि के आदि में जब प्रजा उत्पन्न करने की इच्छा हुई, तब उन्होंने संकल्प रूप तप किया, तप से उन्होंने सर्वप्रथम **''रयि और प्राण''**– इन जोड़ों उत्पन्न किया। ये दोनों मिलकर नाना प्रकार से सृष्टि उत्पन्न की।

इस मन्त्र में सबको जीवन प्रदान करने वाली जो समाष्टि जीवनी शक्ति हैं। उसे 'प्राण' नाम दिया गया हैं। इस जीवनी शक्ति से ही नाम दिया गया हैं। इस जीवनी शक्ति से ही प्रकृति के स्थूल रूप में समस्त पदार्थो में जीवन स्थिति और यथायोग्य सामंजस्य आता हैं। स्थूल भूत समुदाय का नाम 'रयि' रखा गया। जो प्राण रूप जीवनी शक्ति से अनुप्रणित होकर कार्यक्षय होता हैं।

प्राण चेतना हैं, रयि शक्ति और आकृति हैं। प्राण और रयि के संयोग से ही सृष्टि का समस्त कार्य सम्पन्न होता हैं। इन्हीं को अन्यत्र 'अग्नि' और 'सोम' के नाम से भी कहा गया हैं।

आदित्यो ह वॅ प्राणों रयिदेव चन्द्रमा

रयिर्वा सतत् सर्व यन्मूर्त चामूर्त च तस्मर्तिरेव रयि।

प्राण और रयि का स्वरूप समझते हुये कहा गया हैं। इन दोनों तत्वों के संयोग या समिश्रण से बना हैं। यह सूर्य जो प्रत्यक्ष दिखलायी देता हैं। यही प्राण हैं, क्योंकि इसी में सब को जीवन प्रदान करने वाली चेतना शक्ति की प्रधानता और अधिकता हैं। यह सूर्य उस सूक्ष्म जीवनी शक्ति का धनीभूत स्वरूप हैं। उसी प्रकार यह चन्द्रमा 'रयि' हैं, इसमें स्थूल तत्वों को पुष्ट करने वाली भूत तन्मात्राओं की ही अधिकता हैं। समस्त प्रणियों के स्थूल शरीरों का पोषण उस चन्द्रमा की शक्ति को पाकर ही होता हैं।

प्राण के प्रकार

योगशास्त्रों के अनुसार मनुष्य के प्राणिक शरीर में प्राण और उसके प्रवाह के लिये नाड़ियों का एक जाल फैला हुआ हैं। ये नाड़ियॉ बहुत सूक्ष्म वहिकायें हैं। जिनसे प्राण शक्ति का प्रवाह होता हैं।

प्राण को मुख्यतः पॉच भागों में बॉटा गया हैः–

1. प्राण
2. अपान
3. समान
4. उदान
5. व्यान

प्रश्नोपनिषद में कहा हैं कि

''अहमेवर्वेतत्पच्च धात्मानं प्रविभज्यप तद्वाणमवष्टभ्य विधारयामितति''

अर्थात् मैं ही अपने को पंच भागों में विभक्त करके इस शरीर को आश्रय देकर धारण करता हूॅ।

''प्राणोंऽअपानः समानश्चोदानव्यानॉ च वायवः

नागः कूर्मऽथ कूकरों देवदत्तों धनंजय।''

प्राण, अपान, समान, उदान और व्यान ये पंच प्राण हैं। उसके अतिरिक्त नाग कूर्म, कृकल, देवदत्त, धनंजय ये पॉच उपप्राण हैं। इन सबका कार्य भी भिन्न भिन्न होता हैं। ये पंच प्राण, चक्रों तथा नाड़ियों के माध्यम से कार्य करते हैं।

जीव मे पंच प्राण की भूमिका

प्राणः– प्राण वायु का कार्य है। नासिकाओं के द्वारा बाहर के वायु को अन्दर ले जाना और अन्दर के वायु को बाहर निकलना है।

प्राण वायु का कार्य है। नासिकाओं के द्वारा बाहर के वायु को अन्दर ले जाना और अन्दर के वायु को बाहर निकालना है। इसका स्थान मुख्य रूप से मुख से हृदय तक है। यह श्वास–प्रश्वास पर नियंत्रण रखता है। यही प्राण, वायु मण्डलीय ऊर्जा को ग्रहण कर शरीर को जीवित रखता है।

2. अंपानः–अंपान का स्थान नाभि से नीचे होता है। इसका कार्य गूर्दो, मूत्राशय, उत्सर्जक अंगों तथा जननांगों के कार्यो का नियंत्रण और नियमन करता है।

3. समानः–इसका स्थान शरीर में नाभि प्रदेश माना गया है। जो उदर ज्वाला को बढ़ता है। जठर अग्नि को प्रदीप्त करता है। यह पाचन क्रिया में सहायता करता है। यह प्राण और अंपान को संतुलित और समान बनाता है। यह पाचन संस्थान को सक्रिय और नियन्त्रित कर उनके विभिन्न स्त्रावों को संतुलित रखता है।

संयम साधना के द्वारा समान वायु का जीव लेने पर योगी का शरीर तेज–दीप्त बन जाता है।

4. **उदानः**–इस उदान वायु का स्थान कंठ प्रदेश से मस्तिक तक है। इसका मुख्य कार्य शरीर को उन्नत बनाये रखना, अमाशय से विकृत अन्न को वमन के द्वारा बाहर निकालना, शब्दोंच्चारण, संगीत–गायन आदि कार्य इसी उदान के द्वारा होते है।

''उदानजय्याज्जलपड़ कण्डकादिष्वसंग उत्क्रान्तिस्व'।।''

अर्थात् संयम् साधना के द्वारा उदान वायु को जीत लेने पर पंक–किचड़ तथा कांटों से वह बिद्ध नहीं होता है।

व्यास जी ने कहा 'योगी अपने उदान वायु पर वशित्व प्राप्त करके प्राण को दशम द्वार में ले जाकर उत्क्रमण करके उर्ध्वलोक में गमन करता है और मोक्ष को प्राप्त हो जाता है।

5. व्यानः– इसका स्थान संपूर्ण शरीर है। यह संपूर्ण शरीर में व्याप्त है। यह श्वास तथा भोजन के पश्चात प्राप्त ऊर्जा को धमनियों, शिराओं तथा नाड़ियों के माध्यम से संपूर्ण शरीर में भेजता है। यह चार अन्य प्राणों को भी ऊर्जा भेजता है।

उप प्राणः– नाग, कुर्म, कृकल, देवक्षत, धनजंय

1. नागः–नाग का स्थान कंठ से मुख तक है। इसका कार्य डकार लाना और छींक लाना है।

2. कुर्मः– कुर्म प्राण का स्थान पलकें है। इसका कार्य पलकों खोलने व बन्द करना है। इस कुर्म प्राण (वायु) के हम आंखों को खोलने और बन्द करने का कार्य करते है। इसी कुर्म प्राण के माध्यम से पलकें सिंकुडती तथा फैलती है।

3. कृकलः–कृकल का कार्य छींकने तथा ष्वास में सहायता प्रदान करता है ताकि नासिका या गले के माध्यम से कोई पदार्थ भीतर न जा सकें।

4. देवदत्तः–देवदत्त वायु मष्तक स्थानीय है। इसका कार्य जम्हाई लेना तथा अंगडाई लेना है। जिसके पश्चात् क्रमशः नींद आती है और शरीर में स्फूर्ति बनी रहती है।

5. धनंजयः—धनंजय वायु व्यान वायु की तरह संपूर्ण शरीर व्यापी है। यही अति सूक्ष्म नाड़ी तंतुओं में अनुप्रविश्ट होकर संचरण करता है। यह मृत्यु के पश्चात् भी शरीर सामर्थ्य तथा बल—पराक्रम का संवर्दन भी करता है। मृत्यु के पश्चात भी स्थूल शरीर को शोध अर्थात् फूला देना आदि कार्य इस धनंजय का ही कार्य है।

संदर्भ सूची

- आचार्य बालकृष्ण (2013) *आयुर्वेद सिद्धांत रहस्य,* पंतजलि दिव्य प्रकाशन हरिद्वार उ.ख.।
- आयंगार बी के एस (2009) *प्राणायाम* ओरियंट ब्लैकस्वान प्राइवेट लिमिटेड 1/24 आसफ अली रोड नई दिल्ली।
- भारती, अमृता (2002). *आदि ऊर्जा प्राण* केंद्रीय योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा अनुसंधान परिषद् आयुष विभाग जनकपुरी नई दिल्ली।
- जैन, राजीव त्रिलोक (2008). *संपूर्ण योग विद्या* मंजुल पब्लिशिंग हाउस 7/32 अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली।
- कुमार कामाख्या (2010). *योग चिकित्सा संदर्शिका,* हरिद्वार शांतिकुंज श्री वेद माता गायत्री ट्रस्ट।
- परमहंस योगेश्वरानंद (2004). *प्राण विज्ञान* योगनिकेतन ट्रस्ट पंजाबी बाग नई दिल्ली ।
- सरस्वती स्वामी सत्यानंद (1969). *आसन प्राणायाम मुद्रा बंध* योग पब्लिकेशन ट्रस्ट मुंगेर बिहार भारत।
- सरस्वती निरंजनानंद (1997). *घेरंड संहिता* प्रथम संस्करण बिहार मुंगेर योग पब्लिकेशन ट्रस्ट।
- शर्मा श्रीराम आचार्य (2010). *108 उपनिषद ज्ञानखंड* युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट गायत्री तपोभूमि मथुरा।
- त्रिपाठी ब्रह्मानंद (2021). *चरक संहिता* भाग 2 नई दिल्ली दरियागंज चौखंबा संस्कृत प्रतिष्ठान अंसारी रोड।